International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030; Impact Factor: RJIF 5.24
Received: 13-11-2018; Accepted: 16-12-2018
www.advancedjournal.com
Volume 4; Issue 1; January 2019; Page No. 58-61

श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह (पूर्व प्रधानमंत्री) : कृतित्व का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ० इन्द्रजीत सिंह
अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान), शासकीय महाविद्यालय सरई जिला सिंगरौली, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
विश्वनाथ प्रताप सिंह के लिए चुनौतियों से गुजरना नई बात नहीं थी। अपने जीवन में वे चुनौतियों से ही तो खेलते आए थे। पिछड़ी जातियों को समानता एवं विकास की मुख्यधारा में लाने के लिए सरकार द्वारा नियुक्त किए मंडल आयोग की सिफारिशें अर्से से सरकारी आलमारियों में धूल चाट रही थी। चुनौतियों के बीच सिर्फ अपने अंतर्मन की पुकार पर निर्णय लेने वाले विश्वनाथ प्रताप सिंह ने उन सिफारिशों को लागू करने की घोषणा कर, अपने सहयोगियों और विरोधियों को एक साथ चौका दिया। मंडल आयोग की सिफारिशें पार्टी के सवर्ण नेताओं के जातीय हितों के प्रतिकूल थी, मगर राजनीतिक कारणों से वे उसका विरोध भी कहीं कर पा रहे थे। पर्दे के पीछे इन्हीं नेताओं के उकसावे पर दिल्ली समेत देश के अनेक राज्यों में छात्र आन्दोलन तेज हो गया। जगह–जगह से तोड़–फोड़ और आत्मदाह की खबरें आने लगीं। सवर्ण मानसिकता के शिकार मीडिया ने उन दिनों पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाया। खबरों को तोड़–मरोड़कर प्रस्तुत करने तथा स्थिति को और अधिक विस्फोटक बनाने में कई अखबारों ने कोई कोर कसर न छोड़ी, जिसकी आन्दोलन के बाद खूब भर्त्सना भी हुई।

मूल शब्द : श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह, कृतित्व, समीक्षात्मक अध्ययन।

प्रस्तावना
विश्वनाथ प्रताप सिंह का जन्म 25.06.1931 को उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद जिले में एक राजपूत जमीनदार परिवार में हुआ था। वह राजा बहादुर राय गोपाल सिंह के पुत्र थे। उनका विवाह 25 जून 1955 को अपने जन्म दिन पर ही सीता कुमारी के साथ सम्पन्न हुआ था। इन्हें दो पुत्र रत्नों की प्राप्ति हुई।

विश्वनाथ प्रताप सिंह को अपने विद्यार्थी जीवन में ही राजनीति से दिलचस्पी हो गई थी। वह समृद्ध परिवार से थे। इस कारण युवाकाल की राजनीति में उन्हें सफलता प्राप्त हुई। उनका सम्बन्ध भारतीय कांग्रेस पार्टी के साथ हो गया। 1969–1971 में वह उत्तर प्रदेश विधानसभा में पहुँचे। उन्होंने उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री का कार्यभार भी संभाला। उनका मुख्यमंत्री कार्यकाल 9 जून 1980 से 28 जून 1982 तक ही रहा। इसके पश्चात् वह 29 जनवरी को केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री बने। विश्वनाथ प्रताप सिंह राज्यसभा के भी सदस्य रहे। 31 दिसम्बर 1984 को वह भारत के वितमंत्री भी बने। भारतीय राजनीति के परिदृश्य में विश्वनाथ प्रताप सिंह उस समय वित्तमंत्री थे जब राजीव गांधी के साथ में उनका टकराव हुआ। विश्वनाथ प्रताप सिंह के पास यह सूचना थी कि कई भारतीयों द्वारा विदेशी बैंकों में अकूत धन जमा करवाया गया है।[1] इस पर वी.पी. सिंह ने अमेरिका की एक जासूस संस्था फेयरफैक्स की नियुक्ति कर दी ताकि ऐसे भारतीयों का पता लगाया जा सकें। इसी बीच स्वीडन ने 16 अप्रैल 1987 को यह समाचार प्रसारित किया कि भारत के बोफोर्स कम्पनी की 410 तोपों का सौदा हुआ था।[1] उसमें 60 करोड़ की राशि कमीशन के तौर पर दी गई थी। जब यह समाचार भारतीय मीडिया तक पहुँचा, यह समाचार संसद में मुद्दा बन कर उभरा। इससे जनता को यह पता चला कि 60 करोड़ की दलाली में राजीव गांधी का हाथ था। बोफोर्स कांड के सुर्खियों में रहते हुए 1989 के चुनाव भी आ गए। वी.पी. सिंह और विपक्ष ने मुद्दे के रूप में पेश किया। यद्यपि प्राथमिक पड़ताल से यह साबित हो गया कि जांच राजीव गांधी के विरुद्ध जो लगाया गया था बिल्कुल गलत तो नहीं है, साथ ही ऑडिटर जनरल ने तोपों की विश्वसनीयता को संदेह के घेरे में ला दिया था।[2]

भारतीय जनता के मध्य यह बात स्पष्ट हो गई कि बोफोर्स तोपे विश्वसनीयता नहीं हैं तो सौदे में दलाली ली गई थी। इससे पर्दाफाश के कारण राजीव गांधी ने वी.पी. सिंह को कांग्रेस से निष्कासित कर दिया। राजीव गांधी के कारण अफसरशाही और नौकरशाही भ्रष्ट हो चुकी थी। उच्च स्तर पर भ्रष्टाचार के दावे ने भारत के सभी वर्गो को चौंका दिया।[3]

भारत में सामाजिक न्याय और परिवर्तनकारी राजनीति की शुरुआत करने वाले विश्वनाथ प्रताप सिंह गत 27 नवम्बर 2008 को हमारे बीच नहीं रहे। लम्बी बीमारी के बाद उनका निधन हुआ। जानलेवा बीमारी के बावजूद अपने जनसरोकारों के कारण चर्चा में बने रहने वाले पूर्व प्रधानमंत्री की मौत को मुम्बई पर आतंकवादी हमले की घटनाओं ने गुमनाम बना दिया था, चाहें तो यह भी कह सकते हैं कि परिवर्तनकारी राजनीति की अनदेखी करने वाले मीडिया को उनकी उपेक्षा करने का बैठे–बैठाए एक मुद्दा मिल गया, लग तो वर्षों से रहा था कि वे मृत्यु के समानांतर यात्रा पर हैं, परन्तु वे मौत को इतना टाल सकते हैं, यह किसी ने नहीं सोचाा था। गंभीर बीमारी उन्हें बार–बार अस्पताल खींच ले जाती, हर बार वे मृत्यु को चकमा देकर घर लौट आते।

राजनीति से दूर रहकर भी वे राजनीति में बने रहे, न उसका कीचड़ उनकी संतई को दागदार कर सका, न कोई प्रलोभन ही उन्हें उनके सिद्धान्तों से डिगा पाया। आज के बड़बोले नेताओं के पास भले ही मुद्दों का अकाल रहता हो, बड़े–बड़े विश्लेषक, समाजविज्ञान राजनीति के मुद्दाविहीन हो जाने पर भले ही अफसोस जताते रहते हों, मगर विश्वनाथ प्रताप सिंह ने कभी मुद्दों का अकाल नहीं भोगा। परिवर्तनकारी राजनीति के पैरोकार, उसके जोश भरे कार्यकर्ता, बुद्धिजीवी, समाजकर्मी विकल्पों की खोज में विश्वनाथ प्रताप सिंह के आसपास सदैव जमा रहे। उम्मीद–भरी निगाहों से उनकी ओर ताकते रहे, सच्चे मन से कामना करते रहे कि वे आगे बढ़कर विकल्प की जमीन तैयार करें। संभव हो तो नेतृत्व की बागडोर अपने हाथों में संभाले, खूब जानते थे कि विश्वनाथ प्रताप सिंह का शरीर अब उनका साथ नहीं देगा। भीतर ही भीतर छीजती जा रही काया में सक्रिय राजनीति के धूप–ताप सहने का सामथ्य अब शेष नहीं। फिर भी वे उनके इर्द–गिर्द जुटे रहते। उनके लिए विश्वनाथ प्रताप सिंह का होना, बदलाव की उम्मीद, विकल्प का बचे रहना जैसा था। एक सच यह भी है निवर्तमान प्रधानमंत्रियों में अकेले विश्वनाथ प्रताप सिंह ही थे, जो सत्ता से दूर रहकर भी लगातार सक्रिय और चर्चा में बने रहे। इस तथ्य के बावजूद कि सवर्ण मानसिकतायुक्त मीडिया लगातार उनकी उपेक्षा करता रहा।

वर्तमान राजनीति के मरुस्थल में वस्तुतः सिर्फ विश्वनाथ प्रताप सिंह ही थे, जितना नैतिक आभामंडल इतना प्रखर था कि वहां जाकर कुछ न कुद लेकर लौटने का विश्वास सदैव बना रहता था। हालांकि देश के अधिकांश सवर्णों के लिए विश्वनाथ प्रताप सिंह एक खलनायक का नाम था। एक रक्षस जिसने मंडल के दबे–छिपे जिन्न को बाहर निकाला और सामाजिक न्याय की कसौटी पर अपनी सरकार कुर्बान कर दी। अगर मंडल कमीशन की रिपोर्ट को उच्चतम न्यायालय की अनुमति नहीं मिलती तो संभव है, विश्वनाथ प्रताप सिंह का बहुत पहले रानीतिक निर्वासन कर दिया जाता।

उत्तरप्रदेश में कल्याण सिंह और बिहार में संभवतः लालू प्रसाद यादव अथवा उनकी पत्नी राबड़ी देवी की सरकारें थी। देश के अन्य राज्यों में भी पिछड़े वर्ग के मंत्री–मुख्यमंत्री सत्ता में थे, सभी पार्टियां जान चुकी थी कि दलित और पिछड़ों की संगति–सहमति के बिना सत्ता–शिखर तक पहुंच पाना असंभव है। इसलिए कुछ पार्टियां सीधे–सीधे अपनी जिम्मदारी उनके हाथों में सौंप चुकी थी, जबकि कुछ ऐसे मुखौटों से काम चलाना चाहती थी। जनता को भुलावे में रख सकें, ताकि उनपर दलित एवं पिछड़ा वर्ग हितैषी होने का आभास बना रहे और बाकी वर्ग भी प्रभामंडल में रमे रहें। विश्वनाथ प्रताप सिंह दलितों और पिछड़ों को एक मंच पर देखना चाहते थे। इसके लिए वे आजीवन प्रयास भी करते रहे। मगर इसको भारतीय राजनीतिकी अवसरवादिता कहें या उसका अनिश्चित चरित्र या ऊँच–नीच की भावना–युक्त जातीय स्तरीकरण के लंबे दौर में। विभिन्न वर्गों के बीच पैदा हुई अविश्वास की मजबूत दीवार–दलित और पिछड़े एक मंच पर आना तो दूर, उनके अपने भीतर ही इतने टापू बनते चले गए। सामाजिक न्याय का वह नारा ही अर्थहीन हो गया, जो कभी परिवर्तनकारी राजनीति का मूलमंत्र माना गया था।

विश्वनाथ प्रताप सिंह का अपना जीवन भी कम हलचल भरा नहीं था। उन्हें राजा मांडा भले कहा करते हों, मगर राजसत्ता को उन्होंने कभी अपने दिलोदिमाग पर सवार नहीं होने दिया। 25 जून 1931 को दहिया रियासत के जमींदार परिवार में जन्मे विश्वनाथ प्रताप सिंह पिता राजबहादुर रामगोपाल सिंह के पांच पुत्रों मे सबसे छोटे थे। परिवार गहरवार राजपूतों में से आता था। दाहिया की पड़ोसी रियासत मांडा के तत्कालीन राजा भगवती प्रसाद सिंह की कोई संतान न होने के कारण 1936 में विश्वनाथ प्रताप सिंह को उन्होंने गोंद ले लिया था। राजा भगवती प्रसाद सिह तो केवल चार वर्ष जी सके। 1941 में दस वर्ष के दत्तक युवराज विश्वनाथ प्रताप सिंह को राजा मांडा की गद्दी सौंप दी गई। उंगली पकड़ने की उम्र में दूसरों पर शासन करना, नेतृत्व के नाम पर स्वार्थी परिजनों, सरदारों के हाथ की कठपुतली बने रहना, इसे राजशाही की शान माना जाता था।

विश्वनाथ प्रताप सिंह व्यवस्था के इस माहौल को समझ चुके थे। अबोध उम्र में राजा का ताज पहनना तो जरूरी था, मगर जैसे–जैसे होश आता गया, उनका विदेहत्व बढ़ता ही गया। उन दिनों पूरे देश में अंग्रेज सरकार के विरुद्ध माहौल बना हुआ था। जमींदारी प्रथा उठने के कगार पर थी। गरीब किसान और मजदूर वर्ग अंग्रेज शासन के विरुद्ध निरंतर आंदोलनरत थे, जबकि कुछ को छोड़कर अधिकांश जमींदार यथास्थिति बनाए रखना चाहते थे। इस परिवर्तनकारी दौर को किशोर विश्वनाथ ने काफी करीब से देखा था।

दत्तक होने का जो एहसास बचपन में जन्मा वह आजीवन बना रहा। जमींदार परिवार में जन्म लेना और तत्कालीन राजा मांडा द्वारा गोद लिया जाना विश्वनाथ प्रताप सिंह का अपना चुनाव नहीं था, जो प्राप्त हुआ है। उसके वे नैसर्गिक अधिकारी नहीं है, बल्कि किसी और के अभाव का लाभ उठा रहे है। दूसरे की अमानत को संभालने के एहसास ने ही उनके मन में नए वातावरण के प्रति परायेपन का बोध पैदा किया, वे खुद को उस माहौल के प्रति कभी सहज न कर सके। उन्होंने लिखा भी – 'मैं उस परिवार में जाकर स्वयं को बहुत ही असुरक्षित अनुभव करता था, मेरी समस्या थी कि वहाँ के लोग मुझे कैसे स्वीकार करेंगे। मुझे कभी लगता कि मैं उनके परिवार का सदस्य बन चुका हूँ, कभी लगता कि यह सब नकली है और इसके लिए मुझे बाकी दुनिया को जवाब देना होगा।' मांडा के 41 वें राजा बहादुर और देश के आठवें प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह भारतीय राजनीति में सामाजिक न्याय को बहस का मुद्दा बनाने के निमित्त बने, जिससे विभिन्न क्षेत्रों में कई बुनियादी फर्क आए। प्रधानमंत्री पद पर रहते गृह मंत्री मुफ्ती मोहम्मद सईद की पुत्री को अपहरणकर्ताओं से छुड़ाने के लिए आतंकवादियों की रिहाई। रथयात्रा के दौरान लालकृष्ण आडवाणी की गिरफ्तारी और मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू करने का फैसला उन्हें कई बार सुर्खियो में लाया। विश्वनाथ प्रता सिंह को दश की राजनीति को एक नया कलेवर देने का श्रेय दिया जाता है।[4]

सुप्रसिद्ध इतिहासकार सुमित सरकार ने भी माना है कि विश्वनाथ प्रताप सिंह का बचपन से किशोरावस्था तक का दौर, घोर जटिलताओं एवं परस्पर विरोधी चेतनाओं से भरपूर था। यही सच भी है, इसी ने उन्हें स्वभाव से अंतर्मुखी बनाया। बचपन के इन्हीं विरोधाभासों के साथ एक ओर तो वे सक्रिय राजनीति में विभिन्न पदों पर शोभायमान रहें, वहीं दूसरी ओर अपनी तुनकमिजाजी भी बनाए रखी। बचपन के संस्कार, राजा का पद उन्हें राजनीति में स्थापित होने का अवसर प्रदान करते रहे, और माहौल के प्रति परायेपन का एहसास, यह अनुभूति के वे दूसरे के अभाव का सुख भोग रहे हैं, उन्हें उस वातावरण से दूर भागने के लिए उकसाता रहा। बाहरी दुनिया से हारा, उकताया हुआ उनका मन अपने में लौटता तो कभी कविता बनकर फूटने लगता और कभी कूंची के माध्यम से कैनवास संवारने लगता। उनके लिए एक ओर तो अवसरों के दरवाजे हमेशा खुले रहे, दूसरी ओर जब भी अवसर मिला वे राजनीति और पद को ठुकराकर आग बढ़ते गए। उस समय न तो पद की ऊँचाई उन्हें रोक पाई न ही घर–परिवार और शुभाकांक्षियों के आग्रह तथा अन्य जिम्मेदारियां। अपने मन, अपने नैतिकताबोध के सिवाय वे कभी किसी ओर के आगे कभी नमित नहीं हुए। उनके भीतर का असंतोष उनसे हमेशा कुछ न कुछ ऐसा कराता रहा, जो उस परिवेश में रहने वाले लोगों के सर्वथा नया एवं अनोखा था।

विनोबा भावे के भूदान आंदोलन में उन्होंने न केवल सक्रिय हिस्सेदारी की, बल्कि अपनी दो सौ बीघा उपजाऊ जमीन एक झटके में दान कर दी। मांडा तक सड़क मार्ग बनाने के लिए श्रमदान में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। गरीबों और अभावग्रस्त बच्चों की शिक्षा के लिए कोरांव में एक स्कूल की स्थापना की। उसके लिए सिर पर ईंटे भी ढोयीं। आचार्य विनोबा भावे ने उनके स्कूल की नींव रखी थी। बाद में वे कई साल तक वहाँ बच्चों को पढ़ाते रहे। जमींदार परिवार में जहाँ वे जन्में थे, जमीन से अधिकार छोड़ देना एक पागलपन ही था। मगर उन्होंने जब जो जैसा उचित समझा, बिना किसी संकोच अथवा परवाह के उस पर अमल भी किया। वी.पी. सिंह ने पूरी निष्ठा और संपूर्ण समर्पण की भावना के साथ किया, फिर चाहे वह राजनीति हो अथवा कविता या फिर चित्रकारी। राजनीति की तो उसके लंद–फंद से सदैव दूर रहे, लंबे राजनीतिक जीवन में एक भी धब्बा उनके चरित्र पर नजर नहीं आता। चित्रकारी और कविता के क्षेत्र में उतरे तो वहां भी एकाकी साधना को प्राथमिकता दी। कभी किसी तथाकथित बड़े साहित्यकार अथवा चित्रकार से मान्यता की उम्मीद नहीं रखी।

यह उनके राजसी संस्कार ही थे, जिसने उन्हें नेतृत्व का गुण दिया। विद्यार्थी जीवन में ही उन्हें कॉलेज अध्यक्ष चुन लिया गया था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक करने के बाद उन्होंने पूरा विश्वविद्यालय से वकालन की डिग्री प्राप्तकी। राजीनति से जुड़े और 1980 में देश के सबसे बड़े प्रान्त उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री पद तक पहुंचे। उन्हें मुख्यमंत्री पद सौंपने वाली इंदिरा गांधी थी, जिनका वे हमेशा ही सम्मान करते रहे। आगे चलकर राजीव गांधी और कांग्रेस के साथ उनके संबंध खराब हुए। मगर इंदिरा गांधी

के प्रति उनके मन में सम्मान हमेशा ही बना रहा। जिन दिनों चुनावों में नेता कारों के काफिले के साथ चला करते थे, उनके आगे–पीछे अंगरक्षकों की फौज हुआ करती थी। विश्वनाथ प्रताप सिंह अपने कार्यकर्ताओं और समर्थकों को साइकिल अथवा मोटरसाइकिल पर चलने की सलाह देते। वे खुद भी बस में सफर करते, उनकी राजनीतिक सहलता लुभावनकारी थी।

मुख्यमंत्री का पद उन्हें दो करीब दो वर्ष ही बांधकर रख सका। प्रदेश में डाकुओं का आतंक था। प्रदेश के मुखिया के रूप में विश्वनाथ प्रताप सिंह ने उसे अपराधमुक्त करने का बीड़ा उठाया। पुलिस को कामयाबी भी हाथ लगी। प्रतिक्रिया स्वरूप डाकुओं ने एक गाँव पर हमलाकर सोलह निदोर्ष लोगों को गोली से उड़ा दिया। मारे गये लोगों में छः दलित थे। विश्वनाथ प्रताप सिंह ने इसको अपनी असफलता माना और मर्माहत होकर मुख्यमंत्री के पद से इस्तीफा दे दिया। वह राजनीति का ऐसा दौरथा, जब नेताओं में आत्मा नाम की चीज हुआ करती थी। राजनीति में मूल्य नाम की चीज बची हुई थी। असफलता की जिम्मेदारी ओढना व्यक्तिगत कमजोरी न होकर नैतिकता का तकाजा माना जाता था।

विश्वनाथ प्रताप सिंह ने पद से इस्तीफा जरूर दिया, मगर अपनी जिम्मेदारियों से मुंह नहीं मोड़ा था। दस्यु समस्या समाज की सामाजिक आर्थिक विषमताओं की उपज है। सिर्फ हथियार के दम पर उसका हल नहीं खोजा जा सकता। अपनी इस मान्यता के चलते वे इस समस्या के निदान के लिए आगे भी काम करते रहे। करीब साल भर बाद उस समय उम्मीद की किरण नजर आने लगी, जब कोई खतरनाक डाकुओं ने समाज की मुख्यधारा में लौटने की प्रतीज्ञा करते हुए, अपने हथियार उनके आगे डाल दिए। अहिंसा को एक बार फिर हिंसा पर जीत मिली। विश्वनाथ प्रताप सिंह को लोग एक सर्वोदयी नेता के रूप में पहचानने लगे।

भारतीय राजनीति में वह उथल–पुथल का दौर था। इंदिरा गांधी ने विश्वनाथ प्रताप सिंह को केन्द्र में बुला लिया, जहाँ वे महत्वपूर्ण पदों पर रहे। वे संजय गांधी के पसंदीदा नेताओं में से थे, वहीं उन्हें केन्द्र में लाने का माध्यम बने थे। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद जब राजीव गांधी की सरकार बनी तब भी विश्वनाथ प्रताप सिंह पर कांग्रेस का भरोसा बना रहा। उन्होंने उन्हें अपने मंत्रीमंडल में वित्त मंत्री की जगह दी। युवा और स्वप्नदृष्टा प्रधानमंत्री के रूप में राजीव गांधी आर्थिक सुधारों को गति देना चाहते थे। अपने नेता की इच्छा का सम्मान करते हुए विश्वनाथ प्रताप सिह ने लाइसेंस राज को खत्म करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। सोने की तस्करी को रोकने के लिए उन्होंने उसके आयात पर कर कटौती को प्राथमिकता दी, तस्कारी के सोने की बरामदगी दिखाने वाले पुलिसकर्मियों को उन्होने बरामद सोने का एक हिस्सा पुरस्कार स्वरूप देने की घोषणा की, जिसका अनुकूल असर हुआ। यही नहीं गैरकानूनी कर वंचन पर अंकुश लगाने के लिए उन्होंने वित्त मंत्रालय के निर्देशालय को अतिरिक्त शक्तियाँ सौंप दी। उनके वित्तमंत्रित्व काल में कर चोरी के आरोपियों पर आयकर के छापे पड़ने लगे। रसूख वाले लोगों को भी नहीं बख्शा गया। ये कांग्रेस के करीबियों में माने जाते थे। राजीव गांधी पर दबाव पड़ने लगा, फिर जो हुआ वह हमारे सामने की राजनीति का हिस्सा है। राजीव गांधी ने पहले तो उनका मंत्रालय बदला। विश्वनाथ प्रताप सिंह को यह अपनी ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा पर हमला महसूस हुआ। रक्षा मंत्री के पद पर रहते हुए भी उन्होंने विद्रोही तेवर बनाए रखे। नतीजा बोफोर्स और पनडुब्बी सौदों में दलाली के मामले सामने आए। प्रधानमंत्री कार्यालय पर सीधे दलाली में लिप्त होने के गंभीर आरोप लगे। क्षुब्ध होकर राजीव गांधी ने उनसे न केवल मंत्रीपद छीन लिया, बल्कि कांग्रेस से निकाल बाहर किया। राजीव गांधी को इससे अधिक नुकसान हुआ और उनकी मिस्टर क्लीन की छवि में दाग लग गया। विश्वनाथ प्रताप सिंह को जनता ने ईमानदार और नीतिवान नेता मान लिया। उससे कुछ साल पहले ही जनता पार्टी के रूप में कांग्रेस की वैकल्पिक सरकार देने का प्रयोग असफल हो चुका था। उसके घटक रहे वामपंथी और जनसंघी अब परस्पर विरोधी खेमे में थे।

राजीव सरकार के विरुद्ध बढ़ रहे जनाक्रोश का लाभ उठाने के लिए अवसरवादी राजनीति ने उन्हें दुबारा एक घोड़े का सवार बना दिया। पिछले परिवर्तन के नायक जयप्रकाश नारायण रहे थे। इस बार बागडोर विश्वनाथ प्रताप सिंह के हाथों में थी। उन्होंने देश भर में जाकर सरकार और ऊँचे पदों पर बैठे लोगों के भ्रष्टाचार को उजागर करना आरंभ कर दिया। आजाद भारत में यह अपने तरह की पहली घटना थी। विश्वनाथ प्रताप सिंह की निष्ठा और साफगोई लोगों को जयप्रकाश नारायण की याद आने लगी। जनता ने उन्हें हाथों–हाथ लिया, चुनाव परिणाम घोषित हुए तो विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व वाला जनता दल सरकार बनाने की स्थिति में था। सरकार कोई भी हो, मगर प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह न बन पाएं, यह सुनिश्चित करने के लिए पूंजीपतियों ने अपने घोड़े दौड़ा दिए। बताते हैं कि जिन दिनों देश के दसवें प्रधानमंत्री का चयन हो रहा था, देश का एक धनुकुबेर दिल्ली के पांच सितारा होटलों में अपनी थैली खोले बैठा था, कि किसी भी तरह नेताओं को खरीदकर उन्हें विश्वनाथ प्रताप सिंह के विरुद्ध ले जा सके। पहले जाट नेता देवीलाल को प्रधानमंत्री चुना गया, मगर उस वुजुर्ग नेता के मन में कहीं न कहीं अपनी मिट्टी और जनादेश के प्रति लगाव बाकी था। जानते थे कि जनता ने प्रधानमंत्री के रूप में विश्वनाथ प्रताप सिह को ही वोट दिया है, इसलिए वे विनम्रतापूर्वक पीछे हट गए। अवसरवादी नेताओं और उस धन्नासेठ के मंसूबों पर पानी फिर गया। यह उस धन्ना सेठ की पूंजी की हार भले मानी जाए, मगर पूंजीपति वर्ग इतनही जल्दी हार मानने वाला नहीं था। इसलिए चयन के साथ ही विश्वनाथ प्रताप सिंह को हटाने का खेल आरंभ हो चुका था। काश्मीर समस्या उन दिनों शिखर पर थी।

विश्वनाथ प्रताप सिंह ने जगमोहन को वहाँ का राज्यपाल बनाकर भेजा। उन्हीं दिनों एक ऐसी घटना हुई, जिससे उनकी सरकार के ऊपर बदनामी का गहरा दाग लगा। जनता दल सरकार में गृह मंत्री मुफ्ती मोहम्मद सईद की बेटी रूबिया सईद को अपहर्ताओं के चंगुल से छुड़ाने के बदले खूंखार आंतकवादियों की रिहाई राजनीतिक मंच पर उनके जी का जंजाल बन गई। जनता दल के साथ स्वार्थवश आ जुड़े दक्षिणपंथी नेताओं को सत्ता प्राप्ति के अपने वर्षों पुराने स्वप्न को सच करने तथा लोगों को भड़काकर सरकार के विरुद्ध जनमत तैयार कर मौका मिल गया। विश्वनाथ प्रताप सिंह ने इस दाग को सख्त प्रशासक के रूप में ख्याति अर्जित कर चुके जगमोहन को कश्मीर का राज्यपाल बनाकर धोने की कोशिश की। उन्होंने कश्मीरी आतंकवाद पर अंकुश लगाने में कुद हद तक कामयाबी भी प्राप्त की, लेकिन तब तक स्वार्थी पूंजीपति और राजनेता विश्वनाथ प्रताप सिंह के विरुद्ध लामबंद हो चुके थे, उनकी चुनौतियाँ बढ़ती ही जा रही थी।

भीषण राष्ट्रीय तनाव और उथल–पुथल के उस दौर में कोई दूसरा नेता होता तो कभी का पीछे हट जाता। अपने वक्तव्य की उल्टी–सीधी व्याख्या कर उसकी जिम्मेदारी से ही मुंह मोड़ लेता। शाहबानो प्रकरण में स्वयं राजीव गांधी ने कुछ ऐसा ही किया था। मगर वी.पी. सिंह तो किसी और ही मिट्टी के बने थे, कदम पीछे लेना, जिम्मेदारी से मुंह मोड़ना वे मानो जानते ही न थे। चौतरफा विरोध के बावजूद अपने निर्णय पर अडिग रहते हुए वी.पी. सिंह ने संसद में ऐलान किया कि वे इन सिफारिशों के पक्ष में अपनी सरकार भी कुर्बान करने को तैयार है। वे अंत तक अपने वचन पर अड़े भी रहे, बाद में यह पूरी तरह साफ हो गया कि वह आंदोलन स्वयं स्फूर्त नहीं था। उसके पीछे कुछ स्वार्थी राजनीतिज्ञ अपनी गोटियां फेंक रहे थे, वे सवर्ण मतों का धुरवीकरण करने तथा जनाक्रोश की लहर को अपने पक्ष में भुनाना चाहते थे।

लालकृष्ण आडवाणी ने राममंदिर को बहाना बनाया और कमंडल यात्रा पर निकल पड़े थे। देश का तेजी से सांप्रदायिक ध्रुवीकरण

होने लगा। विश्वनाथ प्रताप सिंह ने एक बार फिर दृढ़ता का प्रदर्शन किया। उनके संकेत पर आडवाणी को गिरफ्तार कर लिया गया। भारतीय जनता पार्टी ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा में थी, उसने तत्काल समर्थन वापस लेकर सरकार को अल्पमत में ला दिया। वामपंथियों ने सरकार को सहयोग दिया, मगर वे सरकार बचा पाने में नाकाम रहे। विश्वनाथ प्रताप सिंह ने विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य बनाए रखा, वे न रुके, न झुके, बाबरी मस्जिद पर सांप्रदायिक सोच वाले नेताओं को ललकारते हुए उन्होंने कहा भी था कि आखिर आप कैसा भारत चाहते हैं? ऐसा मजबूत भारत जिसमें विभिन्न धर्मों, मतालंबियों का सम्मान हो, उनमें आपसी समरसता और भाईचारा हो अथवा ऐसा कमजोर देश जो सांप्रदायिक दृष्टि से अलग–अलग खेमों, गुटों में बंटा हुआ हो? उनका सवाल सांप्रदायिक विखंडनवादियों के लिए एक खुली चुनौती जैसा था।

सिद्धांतों के लिए सरकार को दाव पर लगा देने की वह घटना स्वतंत्र भारत के इतिहास में पहली थी। यह काम वही कर सकता था, जो सत्ता को अपनी चेरी समझता हो, जिसे अपने सिद्धान्त कुर्सी से ज्यादा प्रिय हो। वी.पी सिंह तो ऐसा अवसरों पर सिद्ध कर चुके थे। अपने सिद्धान्तों के लिए बड़ी से बड़ी आलोचना को सह लेना, उसके बावजूद उन पर अडिग रहना, वी.पी. सिंह के लिए ही संभव था। सरकार गिरने के बाद भी वी.पी. सिंह की आलोचनाएँ थमी नहीं थी, बल्कि एक के बाद एक राजनीति गोटियां फेंकी जा रही थीं। देश का मीडिया उनके ऊपर आग उगल रहा था। पूरे देश में हड़ताल और आगजनी का माहौल था, विद्यार्थी आत्मदाह कर रहे थे, वी.पी. सिंह अपना त्यागपत्र राष्ट्रपति महोदय को सौंप चुके थे। इसलिए उसके बाद की राजनीतिक–सामाजिक घटनाओं के लिए वे कानूनी रूप से उत्तरदायी भी नहीं थे। बावजूद इसके चुनौतियों से पीठ फेर लेने के बजाय उन्होंने आगे आना उचित समझा।

नवम्बर 1990 की यह एक सच्ची घटना है, जिसका बड़ा ही हृदयग्राही, आंखों देखा वर्णन वेंकटेश रामकृष्णन ने वी.पी. सिंह पर लिये एक ऋद्वांजलि लेख में किया है– उस समय तक उनकी सरकार को गिरे दो सप्ताह बीत चुके थे। एक जनसभा के दौरान आंदोलनरत उग्र विद्यार्थियों की एक भीड़ को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा था–'इस मार–काट और खून–खराबे के बीच मैं तुम्हारी आंखों के सामने खड़ा हूँ, यदि तुम मुझपर धावा बोलना चाहते हो तो रुको मत, आगे बढ़ो, तुम्हें इसकी अनुमति है। मुझपर वहाँ दूर से पत्थर फेंकने या जोर से चीखने–चिल्लाने, गालियाँ देने की भी जरूरत नहीं है। यहाँ मेरे करीब आओ, और वह सब खुलकर करो जो तुम सचमुच करना चाहते हो। मैं हर स्थिति का सामना करने के लिए तैयार हूँ। मगर मुझे इस बात पर दृढ़ विश्वास है कि इस देश में समानता एवं सामाजिक न्याय के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए मैं जो भी कर रहा हूँ, वही उचित है।' रामकृष्णन आगे लिखते हैं कि – 'इन शब्दों के साथ ही विश्वनाथ प्रताप सिंह माइक की बगल से आग बढ़ आए ..... वे दो कदम और आगे बढ़े, अ बवे मंच पर, उग्र भीड़ के ठीक सामने थे। निर्भीक, अटल अ बवे प्रधानमंत्री भी नहीं रह गए थे, फिर भी उन्हें यूं अड़ा देखकर भीड़ स्तब्ध रह गई। उस असाधारण जनसभा के बीच घोर सन्नाटा व्याप गया, उससे पहले दलिज–पिछड़े वर्गों द्वारा आपसी हितों पर चर्चा करने के लिए बुलाई गई उस जनसभा पर ईंट–पत्थरों की दनादन बौछार हो रही थी। उपद्रवी आसपास के मकानों की छतों पर छिपे हुए थे। ईट–पत्थरों और बोतलों की मार से पूर्व केन्द्रीय मंत्री शरद यादव और अजीत सिंह घायल हो चुके थे, उनके सिरों पर गंभीर चोटें आई थी। इलाज के लिए अस्पताल ले जाना पड़ा था, यही वह क्षण था जब वी.पी. सिंह ने माइक संभाला और उपद्रवियों के ठीक सामने चले आए। उन्हें देखते ही भीड़ पर अंतहीन नीरवता व्याप गई। हमलावर जहाँ के तहाँ हो गए, वह एक अदभुत, अद्वितीय अवसर था, उसके बाद वह बैठक शांतिपूर्वक चली। वी.पी. सिंह सहित सभी ने अपना भाषण पूरा किया।'

निष्कर्ष

विश्वनाथ प्रताप सिंह के लिए मंडल कमीशन की रिपोर्ट लागू करना, हाथों से दूर छिटकने जा रही सत्ता के लिए बड़ा राजनीति दाव था, जो उन्होंने अपने प्रतिद्वंदियों को पटकनी देने के लिए चला था। मगर यह भ्रांत अवधारणा है। सत्ता विश्वनाथ प्रताप सिंह का अभीाष्ट न तो थी, न आगे कभी बन पाई। उनका प्रत्येक निर्णय नैतिकता की कसौटी पर कसा हुआ होता था। हर बार किसी न किसी सैद्धान्तिक कारण से उन्होंने ही सत्ता को ठुकराया था। आगे भी ऐसे कई अवसर आए जब वे दुबारा प्रधानमंत्री बन सकते थे। मगर एक बार जिस पद, जिस कुर्सी को उन्होंने छोड़ दिया, उसकी ओर फिर कभी दुबारा न देखा। सत्ता का कोई भी प्रलोभन उन्हें डिगा नहीं पाया। आजकल के नेताओं की कुर्सी के प्रति बढ़ती भूख को देखते हुए यह विलक्षण ही कहा जा सकता है। उनका सारा आग्रह समाज के वंचितों और शोषितों को सामाजिक न्याय के दायरे में लानाथा। देवगौड़ा के प्रधानमंत्री बनने पर जब एक संपादक ने उनसे अपनी राजनीतिक विचारधारा पर टिप्पणी करने को कहा गया तो बिना सकुचे उन्होंने कहा भी कि – 'इस राजनीति का सारा जोर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक शक्तियाँ, अधिकार एवं प्राधिकार उन वर्गों तक पहुंचाना है। वास्तव में इस राजनीति के माध्यम से जो वे चाहते हैं और जो प्राप्त कर रहे हैं, वे उसके सच्चे अधिकारी भी हैं। इसलिए इन वर्गों के नेता अथवा प्रतिनिधि जब भी सत्ता प्राप्त करते हैं, तो इससे मेरा बहुइच्छित, ऐतिहासिक लक्ष्य भी पूरा होता है।'

सामाजिक न्याय के नाम पर विभिन्न राजनीतिक दलों के गठजोड़, उनकी आपसी स्पर्धा, उठा–पटक को वे भारतीय राजनीति की एक त्रासदी मानते थे। अपने विचारों को खुलकर व्यक्त करने में उन्हें कभी संकोच नहीं होता था। कुछ साल पहले जब मायावती ने भाजपा के साथ गठजोड़ से उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री की कुर्सी प्राप्त की तो विश्वनाथ प्रताप सिंह को बहुत आघात पहुंचा था। दिल्ली के एक बड़े अस्पताल में उपचार के दौरान इस घटना पर एक पत्रकार से बातचीत करते हुए उन्होंने कहा था – 'मायावती ने निश्चित ही दलितों में आत्मसम्मान की भावना का संचार किया है। अजारों वर्षो से दलितों की उपेक्षा होती रही है। अब उन्हें लगता है कि उनका नेतृत्व उनके अपने ही हाथों में है। उनका वोट बैंक संगठित है, लेकिन मायावती की समस्या यह है कि वह भाजपा के साथ अपने संबंधों को लेकर स्पष्ट नहीं हैं। इस दुविधा से बाहर आते ही वह एक बड़ी ताकत बन सकती है।' इसके बाद उन्होंने एक घटना का जिक्र करते हुए कहा था – 'पिछली बार उत्तरप्रदेश का मुख्यमंत्री बनने पर वह मेरे पास आई थीं, तब मैंने कहा था – मैं तुम्हें तो अपना आशीर्वाद दे सकता हूँ, तुम्हारी सरकार को नहीं। मायावती के कारण पूछने पर वे बोले – तुमने भाजपा की मदद ली हैं। तुमने उन्हें अपना संरक्षक और चौकीदार नियुक्त किया है, पर ध्यान रहे, जिन्हें तुमने अपने घर की रखवाली के लिए नियुक्त किया है, वहीं तुम्हारी नींव को खोखला करने वाले सिद्ध होंगे।

सन्दर्भ

1. जयन्तु जिज्ञासु, उपेक्षितों के उन्नायक वीपी सिंह : आरक्षण की दास्ता, हिन्दी सबरंग, 27 नवम्बर 2017.
2. सिंह, कृष्ण प्रताप – विश्वनाथ प्रताप सिंह : राजनीति में सामाजिक न्याय के कई नए मुहावरे गढ़ने वाला शख्स, प्रासंगिक, वायर, 25.6.2018
3. ओम प्रकाश कश्यप, विश्वनाथ प्रताप सिंह : सामाजिक न्याय का मसीहा, आखरमाला, 14 अप्रैल 2009.
4. प्रभासाक्षी न्यूज नेटवर्क, वीपी सिंह के इस फैसले से राजनीति में आये थे बुनियादी फर्क, 25 जून 2018